International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232
Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 3; Issue 6; November 2017; Page No. 40-43

डॉ० श्याम सुंदर दास : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

डॉ० अखिलेश कुमार सिंह
एम०ए० (हिन्दी), एम०एड०, नेट, पी–एच०डी०, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर, मध्य प्रदेश, भारत।

सारांश
हिन्दी जगत की महान विभूति श्री श्याम सुन्दर दास की सेवाएँ हिन्दी समाज के लिए अविस्मरणीय है। अपूर्व प्रतिभा के स्वामी बाबू श्याम सुन्दर दास जी उत्साह, लगन एवं कर्तव्यनिष्ठा के कारण अपने विचारों को मूर्तवान् बनाया। "हिन्दी देश की सर्वांगीण विकास हेतु आवश्यक है" विषय पर अपना अनुभव डॉ0 दास ने अपने जीवन के प्रारम्भिक दिनों में ही कर लिया था। जिसके लिए आपने हिन्दी शब्द भंडार को समृद्धशाली बनाया। व्यापक दृष्टि एवं दूरदर्शिता से आपने हिन्दी को जनसाधारण के दैनिक जीवन से निकाल कर साहित्य प्रभागों में प्रतिष्ठित किया।
डॉ श्याम सुन्दर दास का जीवन हिन्दी के महासागर में तैरता था। हिन्दी के लिए ही उन्होंने सोचा और हिन्दी के लिए ही उन्होंने सांस ली। उनके जीवन के लगभग 50 वर्ष हिन्दी की सेवा में ही बीते। डॉ. श्याम सुंदर दास के कर्तव्य एवं कल्पनाशीलता के परिणाम स्वरूप ही हिन्दी ने कम ही वक्त में मील का पत्थर तय किया।

मूल शब्द : डॉ० श्याम सुन्दर दास, व्यतित्व।

प्रस्तावना
ज्ञान एवं धर्म की पावन नगरी काशी (वर्तमान में वाराणसी एवं बनारस के नाम से जाना जाता है) में 14 जुलाई सन् 1876 ई0 को बाबू दास का जन्म एक खत्री परिवार में हुआ। प्राचीन दर्शनशास्त्रियों–कबीर एवं तुलसी की कर्मभूमि काशी, आधुनिक हिन्दी के विकास के सूत्र–रचनाकार भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एवं राजा शिव प्रसाद 'सितारे हिन्द' की जन्मभूमि रही। बाबू जी का जन्म काशी में अवश्य हुआ परन्तु उनका मूल निवास काशी नहीं अपितु निवर्तमान लाहौर राज्य था। पंजाबी खन्ना परिवार में पले–बढ़े बाबू दास के घर में मोहरें ढालने वाली टकसाल थी।
आर्थिक विपन्नता एवं व्यवसाय की अस्थिरता ने उनके पूर्वजों को लाहौर से अमृतसर और अमृतसर से काशी नगरी में ला दिया। बाबू साहब के छोटे पिता पितामह लाला हजारीमल ने काशी में लक्खी चौतरे नामक जगह पर कपड़े का बड़ा व्यवसाय प्रारम्भ किया। निर्धनता के दिन जाते रहे कि अचानक नियति ने पुनः करवट बदला। लाला हजारीलाल का देहावसान हो गया जिससे उन्नति के शिखर पर पहुँचा व्यवसाय धरातल पर गया। जिसका प्रभाव परिवार के अन्य सदस्यों नानकचन्द एवं मेहरचन्द पर भी पड़ा। जो लाला हजारीमल के सहोदर थे। मेहरचन्द के दो पुत्र देवीदास एवं आत्माराम थे। देवीदास एवं आत्माराम ने भी पिता के व्यवसाय में हाथ बँटाया। लाला देवीदास ने अपनी दुकान काशी चौक में खोली। व्यवसाय चल निकला। व्यस्क हो चुके देवीदास के विवाह की चर्चा प्रारम्भ हुई। गुजरानवाला के रहवासी लाला प्रभुदयाल जौहरी की बडी पुत्री देवकी देवी के साथ लाला देवीदास का विवाह सम्पन्न हुआ।
बाबू जी का बाल्यावस्था अत्यन्त लाड़–प्यार एवं दुलार में बीता। आपके जीवन में शिक्षारम्भ लगभग पॉच–छः वर्षों के उपरान्त हुआ। उपनयन संस्कार के पश्चात ही श्री हरभगवान के संदर्शन एवं सानिध्य में बाबू जी ने संस्कृत भाषा, साहित्य एवं व्याकरण के साथ–साथ अनेक धर्म–ग्रन्थों का अध्ययन किया। बाल्यावस्था में ही नौ वर्ष की आयु में डॉ0 दास का विवाह हो गया।
शिक्षा की प्रगति में उन्होंने अपने विवाह को भी बाधक नहीं बनने दिया। उन्होंने शिक्षा को अनवरत् जारी रखा। सन् 1890 ई0 में आपने रानीकुँआ, काशी स्थित हनुमान–सेमिनरी से एंग्लो–वर्नाक्यूलर मिडिल परीक्षा क्वींस कालेज से सन् 1894 ई0 में इन्टरमीडिएट तथा सन् 1897 ई0 में बी0ए0 की परीक्षा उत्तीर्ण की। सन् 1896 ई0 में दास जी बी0ए0 परीक्षा में प्रयाग विश्वविद्यालय में सम्मिलित हुए थे परन्तु आंत्रिक शोथ के कारण वे परीक्षा में असफल रहे। क्वींस कॉलेज, काशी के प्राचार्य आर्थर बेनिस महोदय के आशीर्वाद से विकट परिस्थितियों में बाबू जी ने पुनः अध्ययन प्रारम्भ कर अगले ही वर्ष परीक्षा उत्तीर्ण की।
अपने परिवार की आर्थिक तंगी से तंग बाबू जी ने चन्द्रप्रभा प्रेस, वाराणसी में रूपए 40 के मासिक वेतन पर नौकरी की परन्तु वहॉ उनका मन न लग सका। बाबू जी के मन में कहीं न कहीं अध्यापन कार्य की जिज्ञासा थी। अध्यापन के साथ–साथ वे हिन्दी का प्रचार–प्रसार भी करना चाहते थे। बी0ए0 करने के दौरान ही दास बाबू ने क्वींस कॉलेज में संस्कृत विषय पढाना आरम्भ कर दिया था। आर्थर बेनिस महोदय ने आपका बहुत साथ दिया तथा निराश जीवन को जड़ी–बूटी से नहलाया। बेनिस महोदय भवभूति कृत 'उत्तर रामचरित' पढ़ाया करते थे। बेनिस जी के सम्पर्क में आने पर बाबू जी में हिन्दी भाषा एवं साहित्य के प्रति रूझान अधिक बलबती होती गई।
अठारह वर्ष की आयु में बाबू जी ने अपने विद्यार्थी काल में ही सहपाठियों के साथ मिलकर हिन्दी उत्थान एवं प्रगति के लिए काशी में नगारी प्रचारिणी सभा की नींव डाली। बाबू जी ने सभा में मंत्री पद ग्रहण कर 'हिन्दी पूर्ण जागरण' का नेतृत्व किया। प्रचारिणी सभा में सेवा देते हुए 20 मार्च सन् 1899 ई0 को आपकी नियुक्ति हिन्दू स्कूल, वाराणसी में अध्यापक पद हुआ। इसी बीच एक वर्ष उपरान्त ही 21सितम्बर सन् 1900 ई0 को पिता ने आपका साथ छोड़ इन्द्रलोक चले गये। अपने पिता की मृत्यु के समय बाबू जी हिन्दी पुस्तकों की खोज के सिलसिले में काशी नगरी से बाहर थे। पिता की मृत्योपरान्त परिवार का पालन–पोषण आपके कन्धों

पर पड़ा। उस समय परिवार में कुल बारह सदस्य और आमदनी मात्र रूपये 40–45। जो एक संभ्रान्त परिवार के लिए ऊँट के मुँह में जीरा था। हिन्दू कॉलेज में आपने कुल दस वर्ष अपनी सेवाएँ दी। इस दौरान उनकी आर्थिक स्थिति जर्जर ही रही।

अपनी आर्थिक स्थिति पर चर्चा करते हुए बाबू श्याम सुन्दर दास जी ने कहा था– ''पिता की मृत्यु को अभी एक वर्ष भी नही बीता था कि मेरे एक संबंधी ने मेरी माँ से उस ऋण के विषय में कुछ कटु उक्ति की। माँ मेरे सामने आकर रो पड़ी। मुझे बड़ा दुःख हुआ पर जिसका कुछ देना है, वह यदि कुछ कटु वाक्य कह बैठे तो उसको सह लेने के अतिरिक्त और उपाय ही क्या था ? उस समय मेरी आयु 25 वर्ष की थी। शरीर में शक्ति और उत्साह भरा हुआ था, साथ ही मैं अपमान नहीं सह सकता था। जोश में आकर मैनें माता के सामने प्रतिज्ञा कर ली कि जब तक मैं उस ऋण को न चुका लूँगा तब तक पिता का वार्षिक श्राद्ध न करूँगा।

सन् 1900 ई0 में ही हिन्दी को समर्पित 'सरस्वती' मासिक पत्रिका का प्रकाशन आरम्भ हुआ। जिसके सम्पादक रहे बाबू श्याम सुन्दर दास जी। लेकिन इससे न उनके परिवार का खर्च चलता और न ही बाबू जी को मानसिक शान्ति मिलती। सन् 1902 ई0 में पत्रिका का सम्पादकत्व एवं विद्यालय आदि छोड़ कर पं0 श्रीधर पाठक, जो उनके मित्र थे, के पास रूपये 140/– मासिक वेतन पर कार्य करने शिमला चले गये परन्तु दो–तीन माह में ही पुनः काशी आ गये। श्री गोविन्द दास जी के सहयोग से हिन्दू स्कूल में पुनः प्राध्यापक बने। आन्तरिक विरोधों और वैर–वैमनस्यता के कारण आपने यह नौकरी छोड़ दी। सन् 1908–09 ई0 के दो वर्ष की अवधि में ही अपनी माता, भाई रामकृष्ण, भाभी सहित दो बच्चों के काल कलवित हो जाने पर बाबू जी टूट चुके थे। इस विपरीत परिस्थिति से उबरने के लिए वे श्रीनगर सपरिवार गये परन्तु काशी का प्रभाव उन्हें अधिक दिनों तक दूर नही रख सका। 38 वर्ष की आयु में श्री गंगा प्रसाद वर्मा के निवेदन पर बाबू दास लखनऊ स्थित काली चरण हाई स्कूल में प्रधानाध्यापक हो गये। बाबू जी के कार्यकाल में कालीचरण प्रगति के शिखर पर था।

सन् 1914, 1916 एवं 1918 ई0 में बाबू जी हिन्दी उत्थान के प्रसंग में आयोजित सम्मेलनों में क्रमशः गुरूकुल कांगड़ी, जाबालिपुरम् (वर्तमान में जबलपुर) एवं अलीगढ़ गये। सन् 1920 ई0 में महात्मा गॉधी द्वारा असहयोग आन्दोलन आरम्भ हुआ। जिसका सीधा प्रभाव विद्यालय प्रबन्धन पर पड़ने पर आपने सन् 1921 ई0 में विद्यालय से त्याग पत्र दे दिया और महामना मदन मोहन मालवीय द्वारा स्थापित काशी हिन्दू विश्वविद्यालय (स्थापना वर्ष सन् 1916 ई0) में हिन्दी विभाग के अध्यक्ष के तौर पर पदभार ग्रहण किया। इस विभाग की शुरूआत विश्वविद्यालय में सन् 1921 ई0 को ही किया गया था।

बाबू श्याम सुन्दर दास जी काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के प्रथम अध्यक्ष बने। बाबू जी के अथक परिश्रम से विश्वविद्यालय में बी0ए0 तथा एम0ए0 कक्षाओं में हिन्दी माध्यम से अध्ययन–अध्यापन का श्रीगणेश हुआ। नये–नये पुस्तकों की रचनाएँ हुई। कई प्राचीन पुस्तकों का अनुवाद एवं समीक्षा उनके द्वारा लिखी गई तथा पाठ्यक्रम भी निर्धारित किया गया। हिन्दी विषय में शोध उसी समय विश्वविद्यालय स्तर पर प्रारम्भ किया गया।

सोलह वर्ष तक विश्वविद्यालय को सेवा देने के उपरान्त बासठ वर्ष की आयु में आपने अवकाश ले लिया। अवकाश प्राप्ति के उपरान्त भी आपने स्वयं को हिन्दी से विरत न किया। हिन्दी–सेवा की गतिविधियों में आप सर्वदा लगे रहे लेकिन स्वास्थ्य ने उनका कभी साथ नहीं दिया। अस्वस्थता के बीच ही बाबू श्याम सुन्दर दास जी का निधन अगस्त सन् 1945 ई0 को हुआ। जीवन के अंतिम दिनो में आपकी रूचि मृत–आत्माओं को बुलाने में बढ़ गई थी। उन्हें मृत आत्माओं से बातचीत करना अधिक प्रिय था। जिसका मुख्य कारण था – उनका परलोक विद्या से प्रेम एवं लगाव।

अपने एक खास मित्र से वह हमेशा कहा करते थे कि ये आत्माएँ हमें हिन्दी के प्रचार–प्रसार के उपाय और साधन बताती है। नागरी प्रचारिणी सभा से अलग होने पर भी उनका अनुराग उससे अलग नहीं हुआ। आखिर उसे उन्होंने अपनी कड़ी मेहनत और कार्य–कुशलता से खड़ा किया था। बाबू जी हमेशा कहते– ''जीवन में अब कोई अनुराग नहीं रह गया है फिर भी नागरी प्रचारिणी सभा की रजत जयंती के अवसर पर जीवित रहना चाहता हूँ।

समय का मूल्य आप बड़ी अच्छी तरह समझते थे। समय की अनदेखी करने वाला उनका सबसे बड़ा शत्रु होता। ऐसे लोगों को वह सदैव अनादर की दृष्टि से देखा करते थे। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जी की सुस्ती और समय से कार्य न करने की आदत से वे बहुत परेशान रहते थे। श्री रामचन्द्र शुक्ल जी के विषय में रायबहादुर जी ने अपनी आत्मकथा मे लिखा है–

पं0 रामचन्द्र शुक्ल जी कभी समय पर नहीं आते थे। उनकी प्रकृति ही ऐसी ढ़ीली–ढ़ाली थी कि समय पर काम करना उनके लिए असम्भव था। उनकी देखा देखी और लोग भी देर से आते थे।''

रायबहादुर साहब जन्म–जात हिन्दी–सेवक तथा बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न थे। वे कर्मठ हिन्दी–प्रचारक, उच्चकोटि के साहित्यकार, कुशल अध्यापक, सम्पादक, संस्था संस्थापक, प्रबंधक एवं आयोजक थे। उनकी प्रतिभा इतनी प्रखर थी कि उन्हें किसी विषय पर किसी का शिष्यत्व ग्रहण करने की आवश्यकता नहीं थी। स्वाध्याय ने उनका मनोबल बढ़ाया। वे स्वयं अपने व्यक्तित्व के निर्माता थे।[1] हिन्दी प्रेम एवं लगन के कारण ही उन्हें हिन्दी के "जानसन" के नाम से भी जाना जाता है।

डॉ0 जैनेन्द्र ने बाबू जी के व्यक्तित्व के सन्दर्भ में कहा–''नागरी प्रचारिणी सभा के साथ हिन्दी भाष का इतिहास ओत–प्रोत है और नागरी प्रचारिणी सभा श्री श्याम सुन्दर दास जी के व्यक्तित्व से अभिन्न है।''

प्रो0 नरूल हसन ने हिन्दी की तरक्की का श्रेय राय बहादुर डॉ0 दास को ही दिया है। उन्होनें कहा –''हम इस बात को नज़रअंदाज नहीं कर सकते कि हिन्दी को बनाने, संवारने और उठाने में जिन महान पुरूषों ने काम किया है, उनमें बाबू श्याम सुंदर दास जी का नाम प्रथम न हो। श्याम सुन्दर जी से हमें सबसे बड़ी औषधियह मिलती है कि हिन्दी की तरक्की में ही समस्त भारतीय भाषाओं की तरक्की है चाहे वह किसी भी प्रांत में बोली जाती हो।''

सन् 1903 ई0 को 'सरस्वती' पत्रिका के संपादक का पद–भार लेते समय आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी जी ने डॉ0 दास के आदर में प्रशंसा पत्र पढ़े और पत्रिका में लिखा–

"जिन्होंने बाल्यकाल से ही अपनी मातृभाषा में अनुराग प्रकट किया। जिनके उत्साह और अशान्त श्रम से नागरी–प्रचारिणी सभा की इतनी उन्नति हुई कि हिन्दी की दशा को सुधारने के लिए जिनमें उद्योग को देखकर सहस्रशः साधुवाद दिए बिना नहीं रह जाता। जिन्होंने विगत दो वर्षों में इस पत्रिका के संपादन–कार्य को बड़ी योग्यता से निबाहा, उन विद्वान बाबू श्याम सुन्दर दास जी ने चित्र को इस वर्ष के आदि में प्रकाशित करके 'सरस्वती' अपनी कृतज्ञता प्रकट करती है।"[2]

सरस्वती पत्रिका की सन् 1903 ई0 के प्रथमांक में छपी बाबू की वह सजीव तैलचित्र के नीचे श्री जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी जी ने अपने शब्द दिए। जिसमें लिखा था–

"मातृभाषा के प्रचारक, विमल बी0ए0 पास।
सौम्य शील निधान, बाबू श्याम सुंदर दास।।"[3]

बाबू जी की हिन्दी सेवा से प्रभावित होकर ब्रितानिया सरकार ने उन्हें राय साहब (सन् 1921 ई0) एवं राय बहादुर (सन् 1933 ई0) की उपाधि प्रदान की। यही नहीं श्री पुरूषोत्तम दास जी टण्डन द्वारा सन् 1910 ई0 में प्रयाग में स्थापित हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने उन्हें 'साहित्य–वाचस्पति' की उपाधि से विभूषित किया। श्री विभूति मिश्र वर्तमान में हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग के प्रधानमंत्री हैं।

प्रसिद्ध मार्क्सवादी आलोचक श्री राम विलास शर्मा जी ने अपनी पुस्तक ''भाषा और समाज'' में श्याम सुन्दर दास जी के नाम के आगे 'बाबू' शब्द लगाने पर चर्चा की। श्री शर्मा जी[4] के मुताबिक हमारे भारत वर्ष में 'बाबू' शब्द सम्मानप्रद समझा जाता था। अंग्रेजों ने जिसको बाबू कह दिया, वह कृतार्थ हो गया। हिन्दी भाषा के परम सेवक बाबू श्याम सुंदर दास जी इसी सम्मान सूचक विशेषण के साथ याद किए जाते है। इस प्रकार 'बाबू' शब्द भी राय बहादुर साहब को सम्मान स्वरूप प्राप्त हुआ।

बाबू श्याम सुन्दर दास सिर्फ बी0ए0 उत्तीर्ण थे। हिन्दी के उन्नायक बने बाबू जी को काशी हिन्दू विश्वविद्यालय ने उन्हें डी0लिट्0 की उपाधि से सम्मनित किया। यह बाबू जी का गौरव ही नहीं हिन्दू विश्वविद्यालय के लिए भी गौरव की बात थी। तभी से बाबू जी का नाम डॉ0 श्याम सुन्दर दास लिया जाने लगा।

बाबू जी आधुनिक हिन्दी के निर्माता हैं। वर्तमान युग में हिन्दी संसार में जो भी विभूति दृष्टव्य हैं उनमें बाबू जी का अंश अवश्य दिखाई देता है। बाबू जी हिन्दी के अनन्य साधक, आलोचक, विद्वान एवं प्रसिद्ध शिक्षाविद् थे। बाबू जी का सारा जीवन संघर्ष के समुद्र में डोलता रहा। उन्होंने समाज की कठोरता के आघात को सहा। साथ ही विभिन्न व्यक्तियों ने आपके साहित्यिक जीवन मे रूकावटें भी डाली परन्तु बाबू जी उन विषम परिस्थितियों में भी हिले नही।

बाबू जी का शरीर उनके व्यक्तित्व का परिचायक था। दास जी की प्रतिमा एवं विभिन्न मुद्राओं में चित्रांकित रूपरेखा से वर्ण–गौर, शरीर से हृष्ट–पुष्ट एवं छः फुट कदकाठी वाले रायसाहब, स्वाभाव से क्रोधी परन्तु मिलनसार व्यक्ति थे। लोगों में उनका बडा सम्मान था। रायसाहब को अनियमितता तनिक पसन्द नहीं थी। अपने ईष्ट–मित्रों के साथ नियमित बैठना, बातें करना एवं चने–चिउड़े खाना तो उनकी दैनिक दिनचर्या सी थी। अनुशासन प्रिय एवं समय के पाबन्द बाबू जी इन नियमों को भंग करने वाले के प्रति कभी भी सहानुभूति नहीं रखते थे। ऐसे व्यक्ति उनके क्रोधपूर्ण व्यवहार के शिकार बन जाते थे।

राय बहादुर जी की पारखी नजर अत्यन्त तीव्र थी। वे मानव–गुणों के उच्च कोटी को निथार लिया करते थे। इसके लिए उनकी प्रथम दृष्टि ही काफी रहती थी। नागरी प्रचारिणी सभा काशी के बैनर तले बाबू जी ने अनेक ग्रंथ प्रकाशित करवाएँ। इस कार्य में राय कृष्णदास, पं0 रामचन्द्र शुक्ल एवं पं0 केशव प्रसाद मिश्र ने उनका भरपूर सहयोग दिया। इस सब पर बाबू जी की कृपा बरसी।

बाबू जी का सम्पूर्ण जीवन आर्थिक तंगी में गुजरा। वे जितना भी कमाते थे, उसे तुरन्त खर्च कर दिया करते थे। भविष्य निधि के नाम पर मात्र पुस्तकों का रचनाएँ ही थीं। स्वयं संपादित पुस्तकों की उन्होंने रायल्टी कभी नहीं ली। हाँ, इण्डियन प्रेस–इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित उनकी स्वयं की लिखी पुस्तकों की रॉयल्टी लेने से उन्होंने कभी गुरेज नहीं किया क्योंकि वे उनके परिश्रम से रचित थी जबकि संपादित पुस्तकें तो दूसरो की रचनाएँ हुआ करती है, ऐसा उनका मानना था। यदि वे समस्त पुस्तकों पर रॉयल्टी लेने लगते तो शायद काशी के धनाद्य व्यक्तियों में गिने जाते। लेकिन उनका एक मात्र उद्देश्य राष्ट्र हित में राष्ट्रभाषा का प्रचार–प्रसार करना था। उनका सब कुछ मिट जाए परन्तु वे अपने उद्देश्य से कभी भटके नही।

बाबू जी में उदारता तो कूट–कूट कर भरी हुई थी। वे बाहर से जितने ही सख्त थे अन्दर से उतने ही कोमल। कई बार तो उन्होने स्वयं के पास धन न होने पर भी लोगों की मदद दूसरों से उधार लेकर किया। इसी के परिप्रेक्ष्य में एक प्रसंग है कि एक बार श्री रत्नाकर जी बाबू जी के पास गये और उनके पास रखी एक मात्र रेडियो जिसकी कीमत उस समय बहुत ज्यादा हुआ करती थी, दुर्लभ होने पर भी सीधे हाथ रत्नाकर बाबू को दे दिया। ऐसी उदारता भरी उनकी कई कहानियॉ सुनने एवं पढ़ने को मिलती है।

राय बहादुर साहब ने हिन्दी की उपयोगिता अपनी विद्वता से सिद्ध की कचहरी में प्रचलित उर्दू एवं आंग्ल भाषा के स्थान पर हिन्दी का प्रवेश किया। उच्च शिक्षा में हिन्दी भाषा एवं साहित्य का औचित्य निर्धारण किया तथा पाठ्य–पुस्तकों का निर्माण कर हिन्दी सामग्री एवं संग्रह तैयार किया। उन्होंने हिन्दी को विश्वविद्यालय स्तर पर तब मान्यता दिलवाई जब विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में अध्ययन–अध्यापन का माध्यम मात्र अंग्रेजी ही थी। उन्होंने कई पुस्तकों की रचना कक्षा में दी गई व्याख्यान के आधार ही पर करवाया।

आध्यात्मिकता की भावना से ओत–प्रोत डॉक्टर साहब पूजा–पाठ में असीम आस्था रखते थे। वे शक्ति–उपासना किया करते थे। प्रतिदिन दुर्गा सप्तशती का पाठ किया करते थे और श्रद्धा भाव से नियमित मंदिर जाया करते थे। शक्तिस्वरूपा मॉ लक्ष्मी उनसे सर्वदा रूष्ट रही परन्तु ज्ञानदायिनी मॉ सरस्वती का साया सदैव बाबू जी के सिर पर पड़ा। उनकी ख्याति भी कम न थी। आखिरकार उनकी जन्म भूमि एवं कर्मभूमि धर्मनगरी एवं मंदिरों का शहर वाराणसी ही तो था उसके प्रभाव से बाबू जी कैसे बच सकते थे ?

बाबू जी पूर्वाभासी[5] एवं ज्योतिष–शास्त्र के ज्ञानी भी थे। परिवार के सदस्यों की जन्मकुण्डली आप स्वयं बनाया करते थे। फलित–गणित ज्योतिष की ओर बाबू जी की रूचि और अध्ययन शीलता अधिक थी। एक बार सन् 1900 ई0 में अपनी मॉं के हाथ देखकर उन्होंने किसी विकट आपदा की बात की थी। जिसका परिणाम यह रहा कि कुछ ही दिनों में उनके पिता की मृत्यु हो गई। कहा जाता है कि श्याम सुन्दर दास जी आत्माओं का आह्वाहन किया करते थे। वे उन आत्माओं से अपनी शंका का समाधान पूछते। गोस्वामी तुलसीदास जी के जन्म एवं मृत्यु तिथि का संशोधन आपने इसी विधि के फलस्वरूप किया।

निष्कर्ष

हिन्दी साहित्य एवं भाषा के क्षेत्र में बाबू जी का श्रम अतुल्य है। हिन्दी के प्रचारक एवं प्रसारक बाबू जी के सम्पादकत्व में हिन्दी फलीभूत हुई। हिन्दी के उत्थान में सबसे बड़ी कमी उस समय हिन्दी पाठ्यपुस्तकों की अनुपलब्धता थी। जो श्याम जी के आशीर्वाद से दूर हुई। लेखनी के धनी श्याम सुन्दर दास जी ने भले ही अंग्रेजी साहित्य एवं अन्य साहित्यों से उधार लेकर हिन्दी को परोसा लेकिन वह हिन्दी की आवश्यकता थी। देश की मानसिकता पर पॉव पसारती अंग्रेज़ियत एवं वैदेशिक विचारधारा की काट थी।

श्याम सुंदर दास जी ने हिन्दी के जड़ को उस समय सींचा जब हिन्दी भाषा–साहित्य के क्षेत्र में हाथ की अँगुलियों पर गिने जा सकने वाले ही हिन्दी प्रेमी थे। हिन्दी का जन्म दास जी के जन्म से बहुत पहले हो चुका था फिर भी उनमे प्रगति की गति नही आ सकी थी। जब भी इसमें गति आई तो कभी अरबी, मुगली, पुर्तगाली आक्रमणकारियों के कारण हिन्दी प्रभावित रही तो कभी साढ़े तीन सौ वर्ष लगभग भारत की धरती पर काबिज अंग्रेज हुक्मरानों के द्वारा कुचली गई। स्वतन्त्र भारत में भी हिन्दी को अंग्रेजी के समकक्ष रख कर भारत उदारता की नहीं वरन् विदेशी सत्ता को

सर्वोच्च मानने की गलती कर रहा है। जबकि पाकिस्तान, जापान, चीन, रूस जैसे देश अपनी मातृभाषा के बल पर ही विकसित हो सके हैं।

मौलिक रचनाओं की संख्या दास जी ने बहुत कम दी इसके विपरीत उन्होंने पूर्व लिखित पुस्तकों की उपयोगिता पाठकों को बताई। उनका प्रथम लेख 'संतोष' शीर्षक[6] से जो एक मासिक पत्रिका में सन् 1894 ई0 में छपा था। इसी लेख से बाबू जी की साहित्य–रचना का आरम्भ माना जाता है। बाबूजी ने अपने सम्पूर्ण जीवन–काल में अनेक पुस्तकों की रचना एवं उनका सम्पादन किया। जिसमें से मौलिक पाठ्य–पुस्तकें ग्यारह, सम्पादित पच्चीस, खोजग्रन्थ तीन, जीवनी–साहित्य चार, छात्रोपयोगी ग्रन्थ पन्द्रह के लगभग हैं। इनके अतिरिक्त आपने 'सरस्वती' मासिक पत्रिका एवं 'नागरी प्रचारिणी 'पत्रिका' का सम्पादन भी किया। जिसके सहारे असंख्य विषयों को दास जी ने अपने शब्द दिए। इन विषयों में बाबू साहब की भाषा–नीति अत्यन्त स्पष्ट थी। वे शुद्ध भाषा के समर्थक थे। अन्य भाषाओं फारसी, अंग्रेजी तथा संस्कृत के शब्दों को हिन्दी के पीछे ही रखा करते थे। साहित्य की सरलता उन्हें भाती थी। शब्दों का नवीनीकरण एवं परिष्करण भी बाबू जी के कलम से हुआ।

संदर्भ

1. हिन्दी के सार्थवाहः डॉ श्याम सुंदर दास लेखक : श्री राजेन्द्र सिंह गौड़, सम्मेलन पत्रिका : श्याम सुदंर दास जन्मशती विशेषांक, पृष्ठ 69 प्रकाशन : हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।
2. 'सरस्वती' पत्रिका' :प्रशंसा पत्र, प्रकाशन वर्ष–सन् 1903 ई0 संपादक– आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी जी एवम् पितामह के संस्मरण : कु.प्रमिला खन्ना (सम्मेलन पत्रिका श्यामसुन्दर दास जन्मशती विशेषांक), पृ0 103, प्रकाशक–हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।
3. 'सरस्वती पत्रिका' : तैलचित्र, प्रकाशन वर्ष– सन् 1903 ई0 (प्रथमांक) शब्दकार – श्री जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी जी
4. भाषा और समाज रचनाकार : श्री राम विलास शर्मा संस्करण – 2000ई0 (चौथा) पृ0123 प्रकाशक – राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0, नई दिल्ली
5. पूज्य पिता जी : डॉ॰ श्याम सुंदर दास लेखक : श्री गोपाल लाल खन्ना पृ096 (सम्मेलन पत्रिका श्यामसुन्दर दास जन्मशती विशेषांक), प्रकाशक–हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।
6. पितामह के संस्मरण लेखिका : कु० प्रमिला खन्ना पृ० 103 (सम्मेलन पत्रिका श्यामसुन्दर दास जन्मशती विशेषांक), प्रकाशक–हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।